अंधा कनि अभिमान, काया माया कुल जो,
कालु न डिसनि कंध ते, कश्यो बीठो कानु,
विरलो को गुरमुख रहे, सामी सावधानु,
जंहिंखे आतमग्यानु, सुतह डिनो सतिगुरूअ.

अज्ञानी मनुष्यों के संबंध में सामी जी कहते हैं कि ऐसे अंधे/अज्ञानी मनुष्यों को अपने शरीर, अपनी माया(धन-दौलत) और अपने कुल (वंश, खानदान) का बड़ा अभिमान/अहंकार रहता है। ऐसे अज्ञानी लोग काल/मृत्यु को देख नहीं पाते, जो उनके कंधे पर बाण/तीर कस कर खड़ा है, किन्तु विरला कोई गुरुमुख होगा, जिसे सद्गुरु ने आत्मज्ञान दिया है और फलस्वरूप सावधान हो गया है।

'मैं' और 'मेरा' शब्द अभिमान/अहंकार के प्रतीक हैं। 'मैं', 'मैं' कहना अभिमान सूचित करता है। - 'अहं कारयति इति अहंकार'। अहंकार के कारण 'मैं' देह हूँ का भाव दृढ़ हो जाता है। अभिमान के कारण मनुष्य अनेक प्रकार के भ्रमों में पड़ जाता है। वह समझने लगता है कि 'मैं ही करने वाला और भोगने वाला हूँ।' ऐसे अभिमानी मनुष्य अज्ञानी एवं मूर्ख होते हैं। सद्गुरु के ज्ञान के बिना, अपनी अंतरात्मा को पहचान सकने की दृष्टि उन में नहीं होती। परिणामस्वरूप ऐसे अभिमानी अंधे लोग अपने शरीर, धन दौलत और उच्च कुल पर अभिमान करते रहते हैं। अर्थात् ऐसे अभिमानी मनुष्यों को अपने आत्म-स्वरुप का ज्ञान/बोध हो पाना कठिन होता है। देह, माया और कुल के विचार से परे हट कर आत्मा-परमात्मा के विषय में सोचने की सामर्थ्य उन में नहीं होती। ऐसे अभिमानी जीव अपनी मृत्यु को अपने निकट देख कर भी देख नहीं पाते। अहंकार/अभिमान ने उनकी आंखों पर आवरण/परदा डाल दिया होता है। अत: वे मृत्यु को देख नहीं पाते।

सामी जी कहते हैं कि अपवाद रूप में कोई ऐसा गुरुमुख (गुरु से मंत्र लेने वाला, दीक्षित) होगा, जो सावधान होता है, जिसे सतगुरु द्वारा आत्मज्ञान प्राप्त हुआ होता है। ज्ञान का सूर्य कहे जाने वाले सद्गुरु अपने शिष्य के अज्ञान रूपी अंधकार को सदा के लिए दूर कर देते हैं। ऐसे शिष्य को न अभिमान स्पर्श कर पाता है और न ही मृत्यु का भय भयभीत कर पाता है । सद्गुरु अपने सत् शिष्य को पूर्णता प्रदान करते हैं। सत् शिष्य सद्गुरु से एकाकार होकर विशाल बन जाता है। वस्तुत: सद्गुरु स्वयं अमृत होते हैं और वे शिष्य को अमर-पद पर विराजमान करते हैं।

काल फिरै सिर ऊपरै, हाथौं धरी कमान।
कहै कबीर गहु ज्ञान को, छोड़ सकता अभिमान।।

■